कुन्दकुन्द-कहान
जैन शास्त्रमाला
पुष्प न ११७

卐

प्रकाशक
श्री दि. जैन स्वाध्याय-
मंदिर ट्रस्ट-सोनगढ

卐

[C] लेखक
ब्र. हरिलाल जैन
सोनगढ

卐

हिन्दी-गुजराती
प्रथमावृत्ति २२,५००
श्रावण · २४९६
AUG 1970

卐

: मुद्रक
मगनलाल जैन
अजित मुद्रणालय
सोनगढ

卐

मूल्य
चालीस पैसे

卐

卐 उपोद्‌घात 卐

जिनशासनमें वीतरागी सुखका सच्चा मार्ग बतलाकर भगवान जिनेन्द्रदेवने परम उपकार किया है। जिनशासनके वीतरागी साहित्य द्वारा जिज्ञासु जीवोंको धर्मका सच्चा ज्ञान मिल रहा है; हजारों बालक भी उत्साहके साथ इसका अभ्यास कर रहे हैं और अपने जीवनको उज्ज्वल बना रहे हैं। जैन-धर्मकी उन्नतिका सच्चा उपाय यह है कि बचपनसे ही तत्त्वज्ञान देकर बालकोंके जीवनमें उत्तम धार्मिक संस्कारोंका सिंचन किया जाय। इसी उद्देशको लेकर बालोपयोगी पुस्तकोंकी यह श्रेणी ब्र. श्री हरिलाल जैनके द्वारा तैयार हो रही है। इस श्रेणीमें दस पुस्तकें प्रकाशित करनेकी योजना है।

यह पुस्तक, मात्र बच्चोंको ही नहीं अपितु प्रत्येक जिज्ञासुको उपयोगी है और प्रत्येक जैनपाठशालामें पढ़ाने योग्य है। छोटी-छोटी उम्रमें हजारों बालकोंको ऐसी धार्मिक पुस्तकें पढ़ते देखकर किसको प्रसन्नता नहीं होगी? जैनबालपोथीके पहले भागकी तरह इस दूसरे भागकी भी एक लाख प्रतियाँ शीघ्र पूरी हों और भारतका प्रत्येक घर जैनधर्मके मधुर गीत-गानसे गूँज उठे-ऐसी भावना है। —जयजिनेन्द्र।

सोनगढ —नवनीतलाल सी. जवेरी
श्रावण शुक्ला पूर्णिमा प्रमुख श्री दि जैन स्वा मंदिर ट्रस्ट
वीर सं. २४९६

इस पुस्तककी पंद्रह हजारसे अधिक प्रतियाँ हिन्दी-गुजराती आत्मधर्मके ग्राहकोंको, एवं अन्य जैनपत्रोंके ग्राहकोंको, माननीय प्रमुख श्री नवनीतलालभाई जवेरीकी ओरसे भेंट दी गई है। आपकी वीतरागी साहित्यके प्रचारकी उत्तम भावना प्रशंसनीय है। —प्रकाशन समिति

卐 जय जिनेन्द्र 卐

जैनबालपोथी

निवेदन

श्री वीतरागी देव-गुरु-शास्त्रकी मंगल आज्ञामें, जैनबालपोथीका यह दूसरा भाग आज मेरे साधर्मीबन्धुओंके सुहस्तमें हर्षके साथ समर्पित करता हूँ। जैनसमाजकी उन्नतिके जो अनेकविध कार्य हो रहे हैं उनमें सबसे अधिक आवश्यकता अपनी समाजके हजारों-लाखों बच्चोंके लिये उत्तम धार्मिक संस्कार देनेवाले साहित्यकी है। बालसाहित्यकी अधिकसे अधिक पुस्तकें तैयार होकर बालकोंके हाथमें पहुँचे—यह मेरी हार्दिक उत्कंठा है। आज हजारों-लाखों बालकों अतीव उल्लासके साथ ऐसे धार्मिक साहित्यमें रस लेकर मेरी भावनाको पुष्ट कर रहे हैं, तदुपरांत माननीय प्रमुखश्री नवनीतलाल भाई सी. जवेरी एवं अन्य हजारों साधर्मीजनों मुझे जो सहयोग दे रहे हैं उन सबके प्रति मैं आभार व्यक्त करता हूँ। —जय जिनेन्द्र

—ब्र. हरिलाल जैन

(सोनगढ़)

आप यह पढ़ेंगे—

卐 वंदना 卐

करूं नमन मैं अरिहन्तदेवको;

करूं नमन मैं सिद्धभगवंतको;

करूं नमन मैं आचार्य देवको;

करूं नमन मैं उपाध्यायदेवको;

करूं नमन मैं सर्व साधुको;

पंच परमेष्ठी प्रभु, मेरे तुम इष्ट हो।
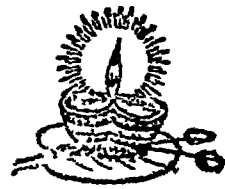
मंगल-प्रार्थना
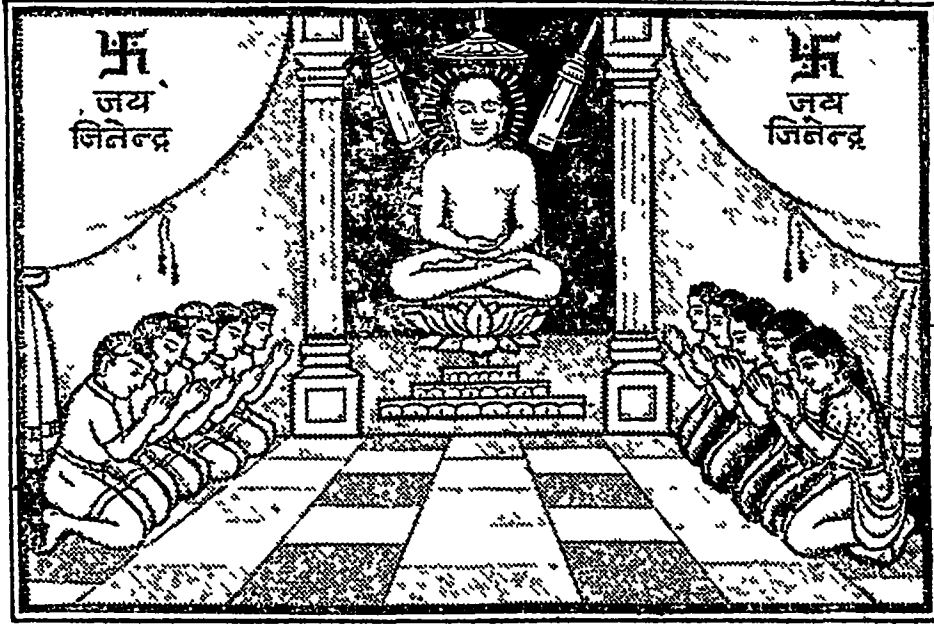
अरिहंत मेरा देव है,
सच्चा वो वीतराग है;
सारे जगको जाने है,
मुक्तिमार्ग दिखाते है... अरिहंत०

जहां सम्यक् दर्शन-ज्ञान है,
चारित्र वीतराग है;
ऐसा मुक्ति-मार्ग है,
जो मेरे प्रभु दिखाते है... अरिहंत०

अरिहन्त तो शुद्धात्मा है,
मैं भी उनही जैसा हूं:
अरिहन्त जैसा आत्मा जान
मुझे अरिहन्त होना है.... अरिहन्त०

卐

पंच परमेष्ठी

बच्चों! कहो, तुम्हें क्या होना प्रिय है?

हमें राजा होना प्रिय नहीं है;

हमें इन्द्र होना प्रिय नहीं है;

हमें तो भगवान होना प्रिय है।

हमें अरिहन्त होना प्रिय है। १।

हमें सिद्ध होना प्रिय है। २।

हमें आचार्य होना प्रिय है। ३।

हमें उपाध्याय होना प्रिय है। ४।

हमें साधु होना प्रिय है। ५।

—ये पांचों हमारे परमेष्ठी भगवान हैं।

वे वीतरागविज्ञानके द्वारा परमेष्ठी हुए हैं।

और उन्होंने हमें भी वीतराग-विज्ञानका उपदेश दिया है।

अपनेको जो प्रिय है उनको प्रतिदिन याद करना चाहिए,
और प्रतिदिन उन्हें नमस्कार करना चाहिए।

पंच परमेष्ठी हमें बहुत प्रिय हैं; वे आत्माके परम शुद्ध स्वरूपमें स्थिर हुए हैं इसलिए परमेष्ठी हैं। हमें भी ऐसा ही बनना है; अतः उन्हें याद करके हम नमस्कार करते हैं—
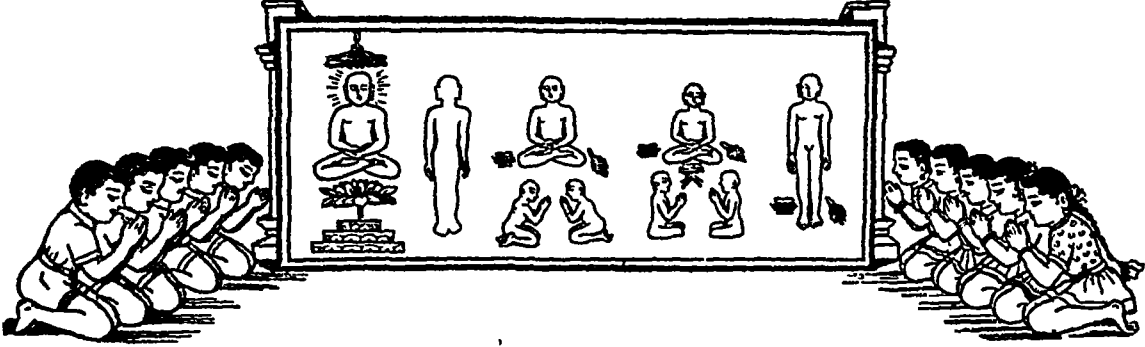
१. णमो अरिहंताणं।
२. णमो सिद्धाणं।
३. णमो आइरियाणं।
४. णमो उवज्झायाणं।
५. णमो लोए सव्वसाहूणं।

इस सूत्रको पंच-नमस्कार-मंत्र कहते हैं।

भाईयों! जिनमंदिरमें दर्शन करते समय प्रतिदिन इस मंत्रको पढना, और सुबह-शाम भी स्तुतिके द्वारा पंच परमेष्ठी भगवानको याद करना—

करूं नमन मैं अरिहन्तदेवको पंचपरमेष्ठी प्रभु मेरे तुम इष्ट हो।१।
करूं नमन मैं सिद्धभगवन्तको पंचपरमेष्ठी प्रभु मेरे तुम इष्ट हो।२।
करूं नमन मैं आचार्यदेवको पंचपरमेष्ठी प्रभु मेरे तुम इष्ट हो।३।
करूं नमन मैं उपाध्यायदेवको पंचपरमेष्ठी प्रभु मेरे तुम इष्ट हो।४।
करूं नमन मैं सर्व साधुको पंचपरमेष्ठी प्रभु मेरे तुम इष्ट हो।५।

[पाठ २]
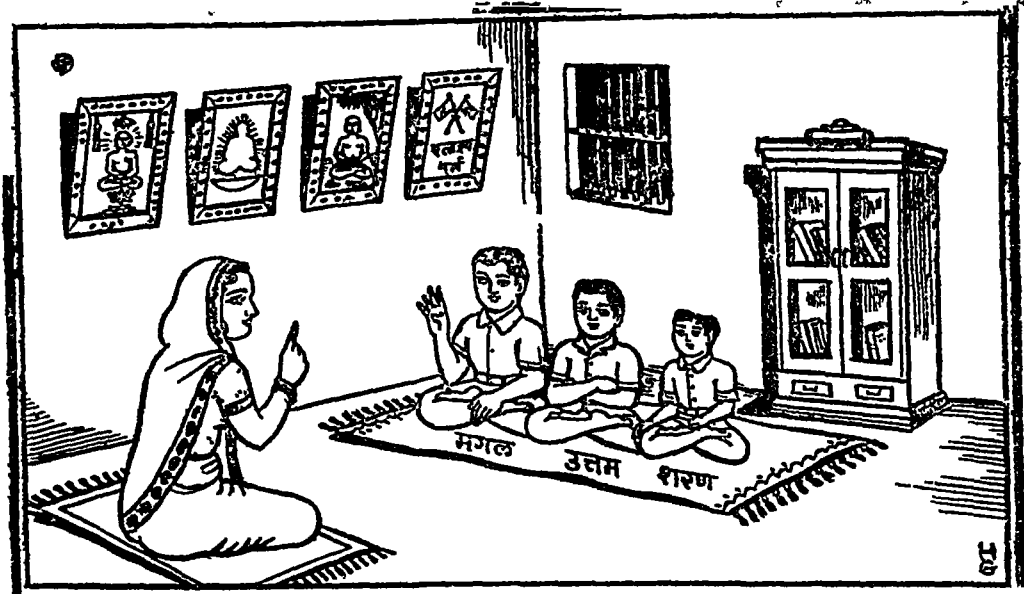
चार मंगल

एक धर्ममाताके तीन पुत्र थे।

उनके नाम थे—मंगल कुमार, उत्तम कुमार, शरण कुमार।

एकबार इन तीनोंसे माताजीने ये तीन प्रश्न पूछे—

(१) बोलो मंगलकुमार, इस जगतमें कौनसी चार वस्तुएँ मंगल हैं?

मंगलने कहा—अरिहन्त भगवान, सिद्ध भगवान, साधु-मुनिराज व रत्नत्रय-धर्म, ये चार मंगल हैं।

(२) माताजीने कहा—बहुत अच्छा; अब उत्तमकुमार, तुम बताओ कि कौनसी चार वस्तुएँ इस लोकमें उत्तम हैं?

उत्तमकुमारने कहा—माँ, इस लोकमें अरिहन्त भगवान, सिद्ध भगवान, साधु-मुनिराज व रत्नत्रयधर्म; ये चार उत्तम हैं।

(३) अब माताजीने तीसरा प्रश्न शरणकुमारसे पूछा—बेटा, इस संसारमें जीवको कौनसी चार वस्तुएँ शरणरूप हैं?

शरणकुमारने ऊपरके चित्र देखकर कहा—माँ! इस संसारमें अरिहन्त भगवान, सिद्ध भगवान, साधु-मुनिराज व रत्नत्रयधर्म, ये चार हमें शरण हैं।
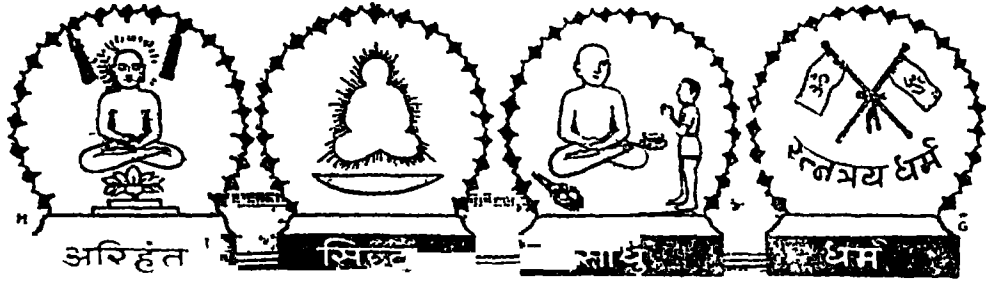
(माता :) बच्चो, आज तुमने बहुत अच्छी बात समझी। इन चारोंको जीवनमें कभी मत भूलना। उन्होंने आत्मज्ञान और वीतरागता प्रगट की इसलिये वे मंगल हुए; यदि हम ऐसा करें तो हम भी मंगलरूप हो जायें। उनके बारेमें नीचेका मंत्र तुम सब एकसाथ बोलो और इसे कंठस्थ करो—

चत्तारि मंगलं—

१. अरिहन्ता मंगलं।
२. सिद्धा मंगलं।
३. साहू मंगलं।
४. केवलिपण्णत्तो धम्मो मंगलं॥

चत्तारि लोगुत्तमा—

१. अरिहन्ता लोगुत्तमा।
२. सिद्धा लोगुत्तमा।
३. साहू लोगुत्तमा।
४. केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो॥

चत्तारि सरणं पव्वज्जामि—

१. अरिहन्ते सरणं पव्वज्जामि।
२. सिद्धे सरणं पव्वज्जामि।
३. साहू सरणं पव्वज्जामि।
४. केवलिपण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि॥

[पाठ ३]
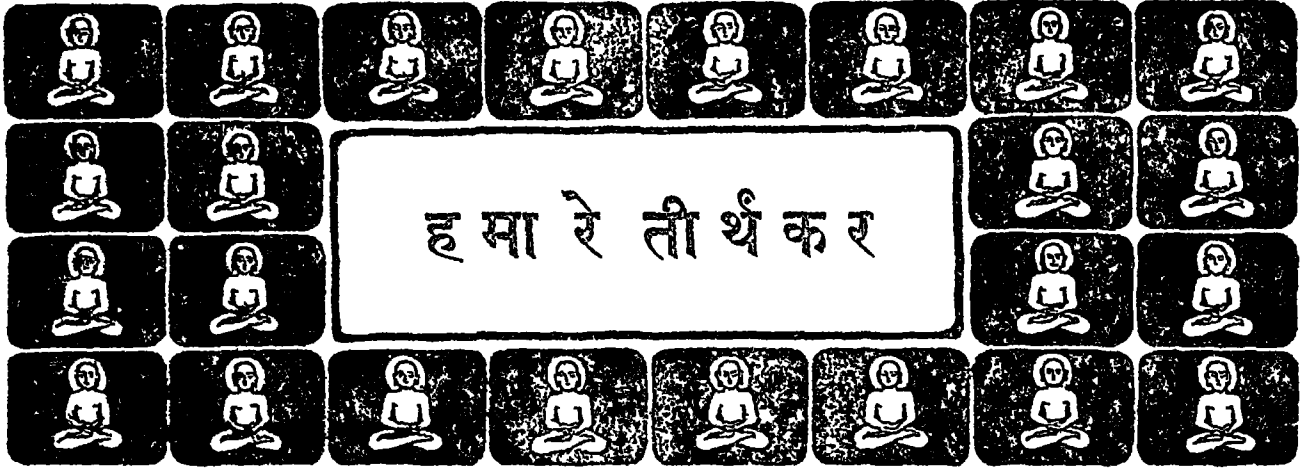
हमारे तीर्थंकर

वीतराग-सर्वज्ञ होकर जो धर्मतीर्थका उपदेश देते हैं, वे हमारे तीर्थंकर हैं। अपनी इस भारतभूमिमें असंख्य वर्षोंके पूर्व भगवान ऋषभदेव हुए; उन्होंने धर्मका सच्चा स्वरूप समझाकर भवसमुद्रसे तिरनेका उपाय दिखाया, इसलिये वे हमारे प्रथम तीर्थंकर हुए। भरत चक्रवर्ती उनके पुत्र थे। भगवानका जन्म अयोध्या नगरीमें हुआ था, अतः अयोध्या हमारा महान तीर्थ है।

ऋषभदेव तीर्थंकरके बाद असंख्य वर्षोंमें २३ तीर्थंकर और हुए, जिनमें अन्तिम तीर्थंकर थे महावीर भगवान; वे हमारे २४ वें तीर्थंकर थे; उन्होंने राजगृहीमें विपुलाचलसे जो धर्मतीर्थका उपदेश दिया वह आज भी चल रहा है, एवं आगे हजारों वर्ष तक चलता रहेगा।

तीर्थंकर भगवानने मोक्षका मार्ग बताया है। मोक्षका मार्ग सभी तीर्थंकरोंने एकसा ही बताया है। अपने आत्माको पहचानकर सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्रको प्रगट करना-यही मोक्षका मार्ग है, उसीको जैनधर्म कहते हैं। जैनधर्मका अर्थ है वीतरागधर्म। वह सबसे ऊंचा है। भगवानके द्वारा बताया गया यह मार्ग हमें बड़े भाग्यसे मिला है, इसलिये हमें आत्माको पहचानकर वीतरागभाव करना चाहिए।

अपने २४ तीर्थंकरोंमेंसे पहले ऋषभदेव व अन्तिम महावीर, इन दो तीर्थंकरके नाम तो तुमने जान लिये; अब बीचके २२ तीर्थंकरोंके नाम जाननेकी भी तुम्हें इच्छा होगी, सो उन्हें भी पढ़ो, और इन २४ तीर्थंकरोंके नाम कंठस्थ करो—

(१) ऋषभदेव	(२) अजितनाथ	(३) संभवनाथ	(४) अभिनन्दन
(५) सुमतिनाथ	(६) पद्मप्रभ	(७) सुपार्श्वनाथ	(८) चन्द्रप्रभ
(९) सुविधिनाथ	(१०) शीतलनाथ	(११) श्रेयांसनाथ	(१२) वासुपूज्य
(१३) विमलनाथ	(१४) अनन्तनाथ	(१५) धर्मनाथ	(१६) शान्तिनाथ
(१७) कुंथुनाथ	(१८) अरनाथ	(१९) मल्लिनाथ	(२०) मुनिसुव्रत
(२१) नमिनाथ	(२२) नेमिनाथ	(२३) पार्श्वनाथ	(२४) महावीर

भारतमें बम्बई, जयपुर, चन्देरी, सम्मेदशिखर, श्रवणबेलगोल, मूडबिद्रि आदि अनेक स्थानों पर हमारे इन चौवीसों तीर्थंकरकी मूर्तियाँ विराजमान हैं, उन्हें देखकर आनन्द होता है। तुम कभी उनके दर्शन अवश्य करना।

हमारे सभी तीर्थंकरोंका जीवन बहुत ऊँचा है। उनका जीवन वीतरागी जीवन है, और वीतरागी जीवन ही ऊँचा जीवन है। तुम बड़े होकर चौवीस तीर्थंकरका जीवनचरित्र अवश्य पढ़ना; उसे पढ़नेसे तुममें धर्मकी भावना जागृत होगी।

बन्धुओं! आज ये तीर्थंकर तो हमारे समक्ष नहीं हैं, परन्तु उनके द्वारा दिखाया हुआ धर्मतीर्थ ज्ञानी-धर्मात्माओंके द्वारा आज भी हमें मिल रहा है। भगवानने सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्ररूप मोक्षमार्ग बताया है, हम सबको उसकी उपासना करनी चाहिये। इस प्रकार भगवानके द्वारा कहे गये धर्मको समझकर उसकी उपासना करना यह हमारा कर्तव्य है। ऐसा करनेसे हम भी एक दिन भगवान बनेंगे।

* * *

चौवीस तीर्थंकर भगवंतोंके चिह्न इस प्रकार हैं—

१. बैल २. हाथी ३. घोड़ा ४. बन्दर ५. चकवा ६. पद्म ७. स्वस्तिक ८. चंद्र ९. मगर १०. कल्पवृक्ष ११. गेंडा १२. भैंसा १३. सुकर १४. सेही १५. वज्र १६. हिरन १७. बकरा १८. मछली १९. कुंभ २०. कछुआ २१. कमल २२. शंख २३. सर्प २४. सिंह। [कंठस्थ करो-]

बैल हाथी और अश्व है, बन्दर चकवा पद्म,
स्वस्तिक चन्द्र रु मगर है. कल्पवृक्ष गेंडा भैंस;
शूकर सेही वज्र है, हिरण बकरा मीन,
कलश कछवा कमल है. शंख सर्प अरु सिंह।
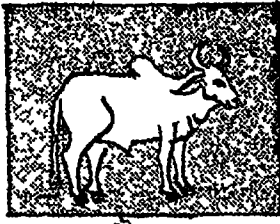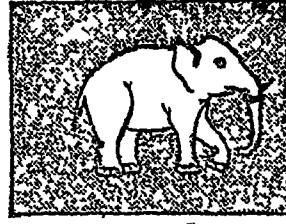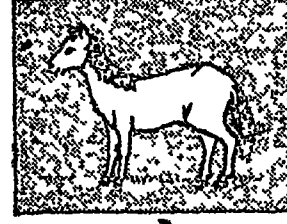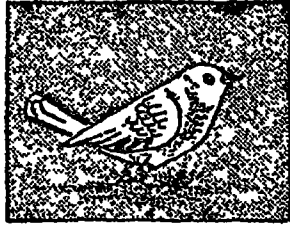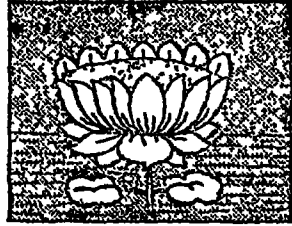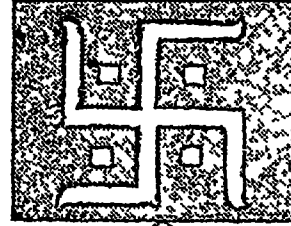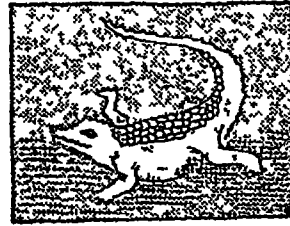
बैल
हाथी
घोड़ा
वन्दर
चकवा
पद्म
स्वस्तिक
चन्द्र
मगर
कल्पवृक्ष
गेंडा
भैंसा
शूकर
सेही
वज्र
हिरण
बकरा
मछली
कुंभ
कछुआ
कमल
शंख
सप
सिह
चौवीस लक्षण प्रभुजीके मंगलकारी जान, पर चैतन्य–चिह्न आत्मका सच्चा वोही मान ।
चेतन–लक्षण जानके कर आतम पहचान, आत्मस्वरूपको ध्यानकर कर ले केवलज्ञान ।।
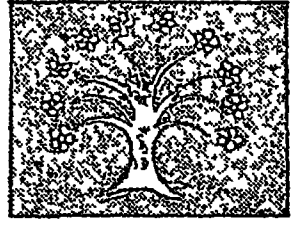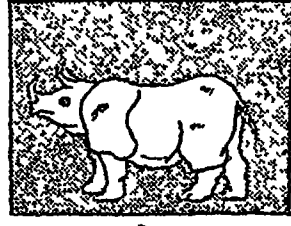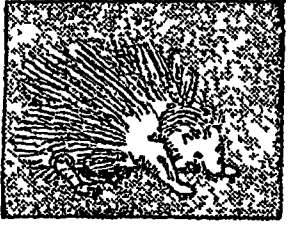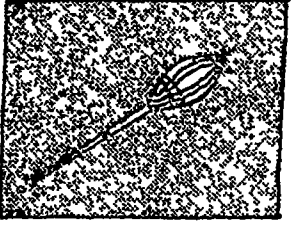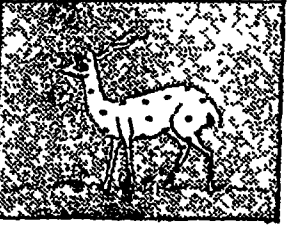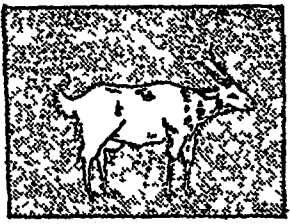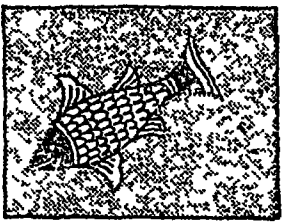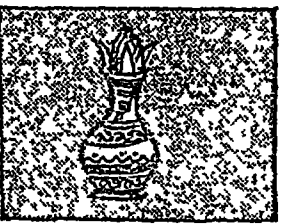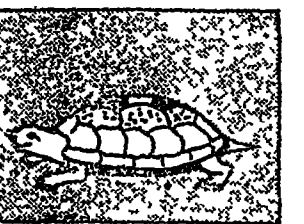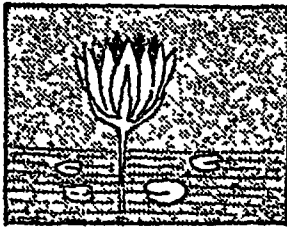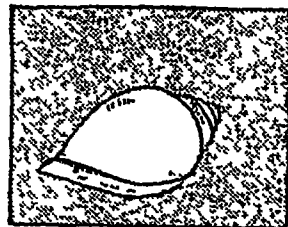
आप जानते ही हो कि अपने भरतक्षेत्रके २४ तीर्थंकरोंमें सबसे पहले भगवान ऋषभदेव हैं। वे असंख्य वर्षके पहले अपनी इस भारत भूमिमें हुए; और उन्होंने ही सबसे पहले धर्मका उपदेश देकर भरतक्षेत्रमें मोक्षका दरवाजा खोल दिया।

सभी देशोंमें भारतदेशका ही यह खास गौरव है कि सभी तीर्थंकर भगवंतोंका अवतार भारतदेशमें ही होता है। भगवान ऋषभदेवका भी अवतार अयोध्या नगरीमें चैत्र वदी नवमीके दिन हुआ था, अतः अयोध्यानगरी हमारे देशका महान तीर्थ है।

भगवान ऋषभदेव पहलेसे भगवान नहीं थे; पहले तो वे भी हमारी तरह संसारमें थे। उनको आत्माका ज्ञान भी नहीं था। दस भव पहले वे महाबल नामक राजा थे, तबसे उनको धर्मका प्रेम जगा और आत्मस्वरूप समझनेकी जिज्ञासा हुई।

इसके बाद जब वे वज्रजंघ नामक राजा हुए तब उन्होंने अपनी श्रीमती रानीके साथ बड़ी भक्तिपूर्वक दो मुनिवरोंको आहारदान दिया। यह प्रसंग देखकर नेवला, सिंह सुअर व बन्दर जैसे प्राणी भी बहुत खुश हुए। और आगे चलकर वे सब ऋषभदेवके ही पुत्र होकर मोक्ष गये।

मुनिओंको आहारदान देनेके फलसे भगवान ऋषभदेवका वह जीव भोगभूमिमें मनुष्य हुआ। साथके सभी जीव भी वहीं पर अवतरे। उस भोगभूमिमें स्वर्ग जैसा सुख है।
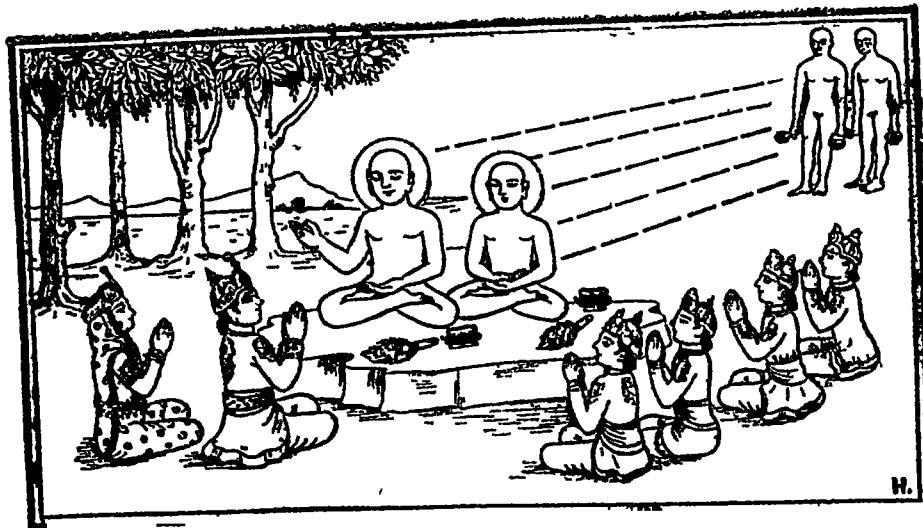
एकबार प्रीतिंकर नामक मुनिराज, जो कि आकाशमें चलते थे, वे उस भोगभूमिमें आये, और बहुत उपदेश देकर भगवानके जीवको आत्मस्वरूप समझाया। यह समझ करके भगवानके जीवने उसी वक्त सम्यग्दर्शन प्रगट किया। सम्यग्दर्शनकी प्राप्तिसे वह बहुत ही आनन्दित हुआ, और उसने मुनिओंकी बहुत भक्ति की। अन्य पाँचों जीवोंने भी आत्मस्वरूप समझकर सम्यग्दर्शन प्राप्त किया।

इसके बाद, अन्तिम तीसरे भवमें भगवानका जीव विदेहक्षेत्रमें वज्रनाभि-चक्रवर्ती हुआ। उस वक्त उसके पिताजी भी तीर्थंकर थे। चक्रवर्ती होते हुए भी भगवान जानते थे कि इस चक्रवर्ती राजमें मेरा सुख नहीं है, सुख तो रत्नत्रयमें है। अतः चक्रवर्तीका राज छोड़के वे मुनि हो गए, और रत्नत्रयका उत्तम पालन करके सर्वार्थसिद्ध देव हुए।

वहाँसे वे अयोध्यापुरीमें नाभिराजाके व मरुदेवीमाताके पुत्ररूपसे अवतरे, वही हमारे भगवान ऋषभदेव। भगवानका जन्म होते ही इन्द्रोंने अयोध्या आकरके बड़ा उत्सव किया।

जिस वक्त भगवानका अवतार हुआ उस वक्त इस भरतक्षेत्रमें तीसरा काल था, लोगोंको सब चीजें कल्पवृक्षसे मिल जाती थीं. परन्तु बादमें जब तीसरा काल पूरा हुआ और कल्पवृक्ष नष्ट होने लगे, तब भगवानने अनाज वगैरहके द्वारा जीवननिर्वाहकी रीत लोगोंको सिखाई। और भी अनेक विद्याएँ सिखाई, एवं भरत-क्षेत्रमें राजव्यवस्था चलायी। भगवानका जीवन बहुत पवित्र था। हिंसा झूठ या चोरी ऐसा कोई पाप उनके जीवनमें नहीं था। उन्हें आत्माका ज्ञान था।

भगवान ऋषभदेव जब राजा थे तब उनको दो रानी थी और १०१ पुत्र थे, उनमें सबसे बड़े भरतचक्रवर्ती, व सबसे छोटे बाहुबली। और ब्राह्मी व सुन्दरी नामक दो पुत्री थी। भगवानने सब पुत्रोंको अच्छा धार्मिक ज्ञान दिया, एवं सभी तरहकी विद्याएँ पढ़ाई।

इस तरहसे बहुत काल बीत चुका तब एकबार चैत्र वदी नवमीके दिन जब अयोध्यामें भगवानका जन्मोत्सव हो रहा था, बड़ा राजदरबार लगा था, अनेक राजा आकर भगवानका अभिनन्दन करते थे व उत्तम वस्तुएँ भेंट धरते थे; देव-देवियाँ भी आकर भक्तिसे नृत्य करते थे। नीला नामकी एक देवी बहुत अच्छा

नृत्य कर रही थी, इतनेमें अचानक नृत्य करते-करते ही उस देवीकी आयु समाप्त हो गई—उसकी मृत्यु हो गई। देहकी ऐसी क्षणभंगुरता देखते ही भगवानका मन संसारसे विरक्त हुआ, और दीक्षा लेकर वे मुनि हो गये। भगवानकी दीक्षाके समय श्री इन्द्रने बड़ा उत्सव किया। अभी तक असंख्य वर्षोंसे भरतक्षेत्रमें कोई मुनि न थे; भगवान ऋषभदेव ही सबसे पहले मुनि हुए।

मुनि होकर भगवानने बहुत आत्मध्यान किया; छह मास तक तो वे ध्यानमें ही स्थिर खड़े रहे; इसके बाद भी सात मास तक ऋषभ-मुनिराजने उपवास ही किये, क्योंकि मुनिको किस विधिसे आहार दिया जाता है यह किसीको मालूम न था। इसप्रकार एक वर्षसे ज्यादा काल भोजनके बिना ही बीत चुका; परन्तु भगवानको कोई कष्ट न था, वे तो आत्मध्यान करते थे और आनन्दके अनुभवमें मग्न रहते थे। इसीको वर्षीतप कहा जाता है।
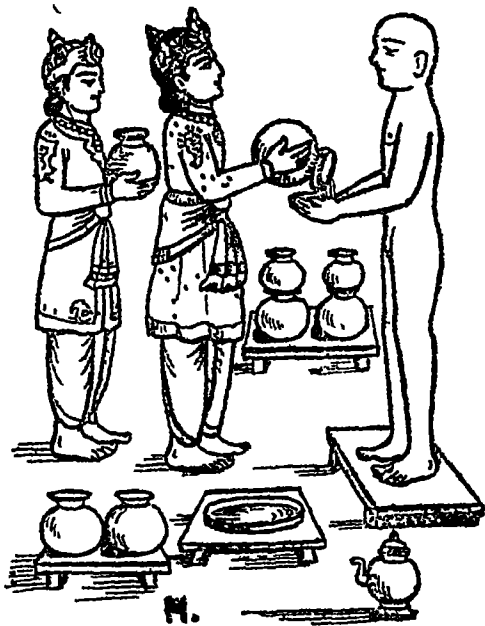
अन्तमें वैशाख सुद तीजके दिन ऋषभमुनिराज हस्तिनापुर पधारे। भगवानको देखते ही वहाँके राजकुमार श्रेयांसको बड़ा भारी आनन्द हुआ और पूर्वभवका ज्ञान हो गया; उन्हें मालूम हुआ कि इन्हीं भगवानके साथ आठवें भवमें मैंने मुनियोंको आहारदान दिया था। बस, यह याद आते ही बड़ी भक्तिके साथ उन्होंने मुनिराजको आह्वानन किया और मन-वचन-कायाकी शुद्धिपूर्वक नवधा-भक्तिके साथ गन्नेके रससे (इक्षुरससे) भगवानको पारणा कराया। मुनि होनेके बाद भगवानने यह पहली ही बार भोजन लिया, अतः यह देखकर सभी लोग बहुत आनन्दित हुए, देवोंने भी आकाशमें बाजे बजाकर बड़ा उत्सव किया। तभीसे वह दिन 'अक्षय तीज' पर्वके रूपमें आजतक चल रहा है।
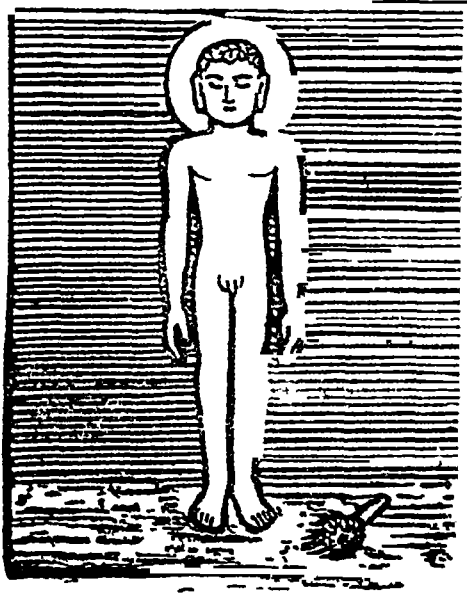
भगवान तो फिर वनमें जाकर अपने आत्मध्यानमें लग गये। उन्हें तो बस, आत्माका ध्यान करना-यही एक काम था, और कोई काम न था। ध्यान करते करते प्रयाग-क्षेत्रमें भगवानको केवलज्ञान हुआ, तब वहां बड़ा भारी उत्सव हुआ, अतः वह प्रयाग भी तीर्थ बन गया। केवलज्ञान होनेसे भगवान ऋषभदेव अरिहन्त हुए-तीर्थंकर हुए। देवों एवं मनुष्यों, पशु एवं पक्षी, सब उनका उपदेश सुननेको धर्मसभामें आये। भगवानने जैनधर्मका उपदेश दिया, आत्माका स्वरूप समझाया और सम्यग्दर्शन-ज्ञान-चारित्रका बोध दिया। यह सुनकर सभी जीवोंको अपार हर्ष हुआ, अनेक जीवोंने आत्माको समझा, अनेक जीव मुनि हुए, और अनेक जीवोंने मोक्ष प्राप्त किया; भगवानके सभी पुत्र भी मोक्षगामी हुए। इस प्रकार भरतक्षेत्रमें भगवान ऋषभदेवने मोक्षका दरवाजा खोल दिया, और रत्नत्रयरूप धर्मतीर्थका प्रवर्तन किया, अतः वे हमारे आदि-तीर्थंकर कहलाये।

बहुत कालतक धर्मका उपदेश देकर भगवान ऋषभदेव कैलासपर्वतके ऊपर पधारे और वहींसे माघ वदी १४की सुबहमें मोक्ष पधारे; संसारसे छूटकर भगवान सिद्ध हुए। आज भी सिद्धलोकमें वे पूर्ण आनन्दमें विराज रहे हैं; उनको नमस्कार हो !

भगवानने धर्मका जैसा उपदेश दिया वैसा हमें समझना चाहिए, और भगवानने जैसी आत्मसाधना की वैसी हमें भी करना चाहिए।

[पाठ ५]
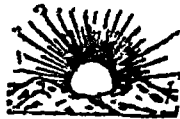
सौ राजकुमारोंकी कहानी

[जीव और अजीवकी समझ]

बच्चो, सौ राजकुमारोंकी इस छोटीसी कहानीमें तुमको जीव और अजीव वस्तुकी समझ दी जाती है; तुम इसे समझना, एवं उन राजकुमारों जैसे धर्मात्मा तुम भी बनना।

ऋषभदेव भगवानके जमानेकी यह बात है। भगवान ऋषभदेव तीर्थंकर जब अपनी इस भरतभूमिमें विचरते थे, उस समय उनके पुत्र भरतचक्रवर्ती इस भरतक्षेत्र पर राज्य करते थे, और जैनधर्मका बड़ा प्रभाव था। अनेक केवली भगवन्त, मुनिवर व धर्मात्मा इस भूमि पर विचरते थे।

भरत महाराजाके अनेक पुत्र थे। इन्द्र जैसा उनका रूप था; किन्तु वे जानते थे कि यह रूप तो शरीरका है, आत्माकी शोभा इससे नहीं है, आत्माकी शोभा तो धर्मसे है। भरतके राजकुमार धर्मी थे, आत्माको जानते थे और मोक्षमें जानेवाले थे।

एकबार छोटी उम्रके १०० राजपुत्र वनमें गेंद खेलने गये। वे खेलनेवाले राजकुमार ज्ञानी व वैरागी थे; खेलते हुए भी उन्हें ऐसा विचार

आता था कि अरे, मोहरूपी लाठीकी मार खा-खाकर गेंदकी तरह यह जीव संसारकी चारों गतिमें बहुत घूमा; अब तो आत्मसाधना पूर्ण करके जल्दी इस संसारसे छूटेंगे। हमारे ऋषभ-दादा तो केवलज्ञानी-तीर्थंकर हैं, पिताजी भी इसी भवमें मोक्ष पानेवाले हैं, और हमें भी इसी भवमें मुक्त होकर भगवान बनना है।

देखो तो सही! छोटे छोटे बालक खेलते हुए भी कितनी सुन्दर भावना करते हैं! धन्य है उनको!
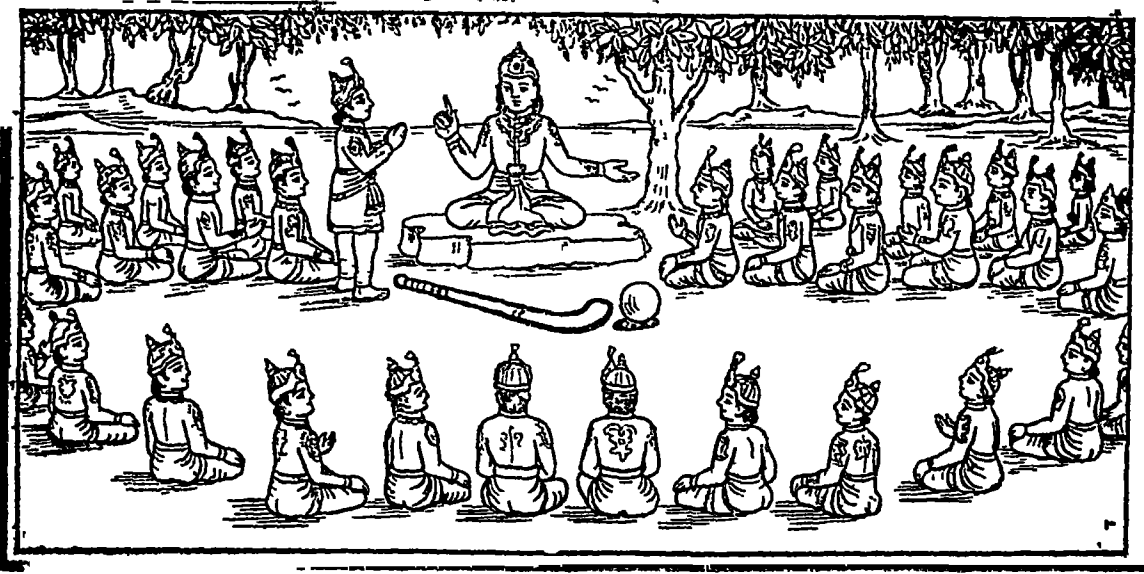
खेल पूरा होनेके बाद सभी राजकुमार वहीं पर धर्मचर्चा करने लगे। सबसे बड़े कुंवरका नाम रविकीर्तिराज था, और छोटे कुंवरका नाम सूर्यकीर्तिराज था। उसे धर्मचर्चाकी इतनी लगन थी कि पूरे दिन धर्मचर्चा करते हुए भी वह थकता नहीं था। बड़े भाई उससे प्रश्न करते थे और वह उनका उत्तर देता था; अन्य सभी कुमार सुन रहे थे। बहुत आनन्दसे चर्चा चल रही थी:—

बड़े कुंवरने प्रश्न किया:—यह गेंदका खेल खेलनेसे हमें कितना सुख मिला?

छोटे कुंवरने उत्तर दिया:— इसमेंसे हमको सुख नहीं मिल सकता।

प्रश्नः—खेलनेमें हमको आनंद तो आया?

उत्तरः—वह तो रागका आनंद था; आत्माका सच्चा आनंद वह नहीं था।

प्रश्नः—गेंदमेंसे सुख क्यों नहीं आता?

उत्तरः—क्योंकि उसमें सुख है ही नहीं।

प्रश्नः—उसमें क्यों सुख नहीं?

उत्तरः—क्योंकि वह अजीव है, अजीवमें सुख नहीं होता।

प्रश्नः—तो सुख किसमें है?

उत्तरः—सुख जीवमें है।

प्रश्नः—जीव और गेंदमें क्या अंतर है?

उत्तरः—जीवमें ज्ञान है; गेंदमें ज्ञान नहीं है।

प्रश्नः—तो क्या इस जगतमें दो तरहकी वस्तुएँ हैं?

उत्तरः—हाँ; एक ज्ञानसहित, दूसरी ज्ञानरहित, ऐसी दो प्रकारकी वस्तुएँ हैं।

जिस वस्तुमें ज्ञान हो उसे 'जीव' कहते हैं।
जिस वस्तुमें ज्ञान न हो उसे 'अजीव' कहते हैं।

एक कुंवर कवि था, उसने तुरन्त ही जीव-अजीवका काव्य बनाकर सबको सुनायाः—

जीव समझना उसको जिसमें होता ज्ञान।
अजीव जानो उसको होय न जिसमें ज्ञान।
जीव अजीवको जानके कर लो आतमज्ञान।
होगी आतमज्ञानसे पदवी मोक्ष महान॥

रविकीर्तिः—जीव वस्तुमें ज्ञानके सिवा और भी कुछ है?

सूर्यकीर्तिः—जी हाँ; जीवमें ज्ञानके साथ सुख है, अस्तित्व है, श्रद्धा है, चारित्र है; ऐसे तो अपार गुण जीवमें हैं।

रविकीर्तिः—यह गेंद तो अजीव वस्तु है, इसमें ज्ञान नहीं है, तो दूसरा कुछ इसमें होगा या नहीं?

सूर्यराजः—हाँ, इसमें भी इसके गुण होते हैं; क्योंकि—

जीव या अजीव प्रत्येक वस्तुमें गुणोंका समूह होता है; गुणोंके समूहको ही वस्तु कहते हैं।

इस प्रकार जीव-अजीवकी चर्चासे सभी राजकुमारोंको बहुत खुशी हुई, और उसीका विचार करते हुए वे घरकी ओर चले।

दूसरे दिन क्या हुआ? उसकी कहानी अगले पाठमें पढ़िये →

कंठस्थ करो—

जीव समझना उसको जिसमें होता ज्ञान।
अजीव जानो उसको होय न जिसमें ज्ञान।
जीव अजीवको जानके कर लो आतमज्ञान।
होगी आतमज्ञानसे पदवी मोक्ष महान।

卐

सौ राजकुमारोंकी कहानी (दूसरा भाग)

[चलो दादाके दरबार......चलो प्रभुके दरबार]

भरत चक्रवर्तीके सौ राजकुमारोंकी यह कहानी चल रही है। दूसरे दिन जब वे राजकुमार वनमें इकट्ठे हुए तब, प्रथम सबने मिलकर प्रार्थना की—

आतमा अनूपम है दीसे राग-द्वेष विना, देखो भवि जीवो ! तुम आपमें निहारके।
कर्मको न अंश कोउ भर्मको न वंश कोउ, जाकी शुद्धताईमें न और आप टारके॥
जैसो शिवखेत वसे तैसो ब्रह्म यहां लसे, यहां वहां फेर नाहीं देखिये विचारके।
जोइ गुण सिद्धमांहि सोइ गुण ब्रह्ममांहि, सिद्ध ब्रह्म फेर नाहीं निश्चै निरधारके॥

प्रार्थनाके वाद रविकुमारने कहाः—वंधुओ ! कल हमने जीव-अजीवकी बहुत अच्छी चर्चा की थी; आज भी खेलनेके पहले हम धर्मचर्चा ही करेंगे।

सभीने कहाः—बहुत अच्छा; तत्त्वचर्चामें जो आनन्द आता है वह खेलनेमें नहीं आता।

तव रविकुमारने अनंगराज नामके दूसरे कुमारसे कहाः—भैया ! कल जीव-अजीवकी जो चर्चा हुई थी उसका सार तुम सुनाओ।

अनंगराजने खड़े होकर प्रसन्नतासे कहाः सुनिये—

जिसमें गुणोंका समूह हो उसे वस्तु कहते हैं।
वस्तु दो प्रकारकी है—(१) जीव (२) अजीव।
जीववस्तुमें ज्ञान होता है; अजीवमें ज्ञान नहीं होता।
जीववस्तुमें सुख होता है; अजीवमें सुख नहीं होता।

अजीव वस्तुको अपनी मानना और जीवको न पहचानना सो अज्ञान है; अज्ञानके कारण, गेंदकी तरह जीव संसारमें भटकता है। अतः हमें जीव व अजीवकी पहचान करना चाहिए, जिससे संसार-भ्रमणका दुःख मिटे व मोक्षसुख मिले।

इस प्रकार धर्मचर्चा पूरी होनेके बाद सभी राजकुमार खेलनेकी तैयारी कर रहे थे, कि इतनेमें दूरसे एक घुड़सवार आता हुआ दिखाई दिया।

पासमें आकर उस घुड़सवारने समाचार दिया कि हस्तिनापुरके राजा जयकुमारने ऋषभदेव प्रभुके पास दीक्षा ले ली है और वे भगवानके गणधर हुए हैं। पहले वे भरतचक्रवर्तीके सेनापति थे; वैराग्य होने पर अपने मात्र छह सालके कुंवरको राजतिलक करके वे मुनि हो गये। चक्रवर्तीका प्रधानपद छोड़कर अब वे तीर्थंकर भगवानके प्रधान बन गये।

घुड़सवारके मुँहसे यह समाचार सुनते ही सब राजकुमारोंको आश्चर्य हुआ, और उनके मनमें भी संसारसे वैराग्य हो गया। 'अहो! उनका जीवन धन्य है!' ऐसा कहकर उनके प्रति नमस्कार किया और वे सब अपने अपने मनमें दीक्षा लेनेका विचार करने लगे; दीक्षाके लिये वे सब भगवान ऋषभ-देवके समवसरणकी ओर जाने लगे। चलते चलते वे गा रहे थे कि—

चलो प्रभुके दरबार चलो दादाके दरबार
प्रभुकी वाणी सुनेंगे .. मुनिदशा हम धारेंगे .
रत्नत्रयको पावेंगे .केवलज्ञान प्रगटायेंगे .
संसारसे हम छूटेंगे . सिद्ध स्वयं बन जायेंगे .
चलो दादाके दरबार . ...चलो प्रभुके दरबार.

—इस प्रकार गाते गाते सभी राजकुमार दीक्षा लेनेके लिये ऋषभ-दादाके दरबारमें पहुँचे; भगवानको नमस्कार किया, जयकुमार-मुनिराजको भी नमस्कार किया; और दीक्षा लेकर वे सब मुनि हुए। सौ राजकुमारोंकी दीक्षाका यह प्रसंग ऐसा अद्भुत है कि जिसे सुनकर हमें भी वैराग्य-भावनाएँ जागतीं हैं। दीक्षाके बाद छोटे छोटे वे सब मुनि आत्मध्यानमें मग्न हुए। कितने काल तक आत्मध्यान करते हुए उन्होंने केवलज्ञान प्रगट किया, और वे सब मुक्त हुए, भगवान हुए।

बन्धुओ, जीव और अजीवकी सच्ची पहचानपूर्वक उत्तम चारित्रका यह फल है; अतः तुम भी जीव-अजीव वस्तुको अच्छी तरह समझना और इन वैरागी राजकुमारों जैसा अपना जीवन बनाना।

जिनवर-दर्शन

[जिनकुमार व राजकुमारकी कहानी]

जिनकुमार व राजकुमार दो मित्र थे।

एक दिन सुबह जिनकुमार जिनमंदिरकी ओर अरिहन्तदेवके दर्शन करनेके लिये जारहा था, कि सामनेसे राजकुमार मिल गया; वह बड़े हर्षसे कहीं जारहा था।

जिनकुमारने उससे पूछा : भैया, इतने हर्षभरे कहाँ जा रहे हो?

राजने कहा : अरे, क्या तुम्हें मालूम नहीं कि अपनी नगरीके राजा पधारे हैं! मैं राजासे मिलने जा रहा हूं।

जिनकुमारने कहा : अच्छा भैया; परन्तु तुम जिनभगवानके दर्शन कर आये?

राज : नहीं भाई! आज तो मुझे भगवानके दर्शन करनेका समय ही नहीं मिलेगा।

जिनकुमार : बड़े दुःखकी बात है कि तुम भगवानके दर्शन भी नहीं करते!

राज : परन्तु आज तो राजासे मिलना है, फिर ऐसा मौका कब मिलेगा?

जिनकुमार : देखो भाई! क्या तुम नहीं जानते हो कि अपने भगवान तो राजाओंके भी राजा हैं; भरतचक्रवर्ती जैसे महाराजा भी जिनेश्वर भगवानके चरणोंमें अपना मस्तक झुकाते थे। तो फिर तुम राजाको देखनेके बहाने ऐसे वीतराग भगवानको भूल रहे हो—यह कैसी बात है?

राजकुमारः—तो मुझे क्या करना चाहिये ?

जिनकुमारः—किसी भी परिस्थितिमें भगवानका दर्शन नहीं छोड़ना चाहिए; क्योंकि हम जिनवरकी सन्तान हैं। हमें प्रतिदिन देवदर्शन, गुरुसेवा व शास्त्रस्वाध्याय करना चाहिये।

राजः—आपकी बात सच्ची है; मुझे सच्चा मार्ग दिखानेके लिये मैं आपका आभार मानता हूँ; और अभी आपके साथ ही मंदिरजीमें चलता हूँ।

जिनकुमारः—बहुत अच्छा, चलिये।

दोनों मित्र मन्दिरजी पहुँचे। मन्दिरमें आकर भगवानका दर्शन करते ही दोनोंको बहुत आनन्द हुआ। बड़ी भक्तिके साथ वन्दन करके नमस्कारमंत्र बोले; अपने सिर पर गंधोदक लगाया एवं तिलक भी लगाया।

राजः—मित्र, चलो हम भगवानकी कोई स्तुति बोलें।

जिनकुमारः—हाँ देखो, समन्तभद्रस्वामीने अर्हन्त भगवानकी अच्छी स्तुति की है, उसमें कहा है कि—

हे देव ! आप मोक्षमार्गके नेता हो;
आप कर्मरूपी पहाड़के भेत्ता हो;
आप सभी तत्त्वोंके ज्ञाता हो;
अतः आप जैसे गुणोंकी प्राप्तिके लिये
मैं आपको वन्दन करता हूं।
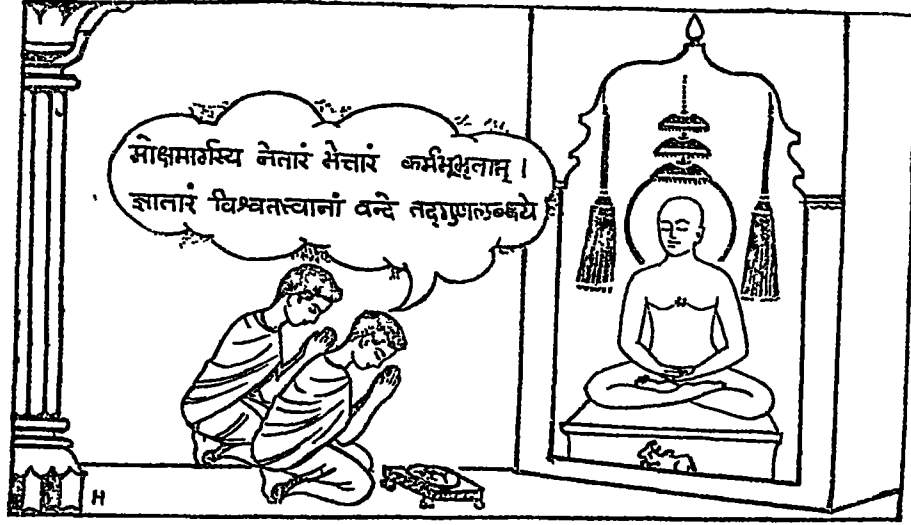
राजः—वाह, बहुत अच्छी स्तुति है! भगवानको वन्दन करते हुए स्वयं भी भगवान होनेकी भावना भायी है। यह स्तुति मैं कंठस्थ करना चाहता हूं।

जिनकुमारः—हाँ, जरूर करना चाहिये; सुनो इसका मूल श्लोक यह है—

मोक्षमार्गस्य नेतारं भेत्तारं कर्मभूभृताम् ।
ज्ञातारं विश्वतत्त्वानां वन्दे तद्गुणलब्धये ॥

राजः—अच्छा! सुनो, अब मैं इसका हिन्दी बोलता हूं—

प्रभो, मोक्षमार्गके नायक हो, तुम कर्मगिरिके भेदक हो;
अखिल विश्वके ज्ञायक हो जिन! हमसे वन्दनलायक हो।
आप जैसे हैं गुण मेरेमें, मैं भी उनको चाहत हूं,
निजगुण-प्राप्ति-हेतु जिनवर मैं वन्दन तुमको करता हूं॥

दोनों मित्रोंने बड़ी विनयके साथ और भी अनेक स्तुति की। बादमें हाथमें चावल-बदाम आदि अर्घ लेकर प्रभुका पूजन किया—

जल परम उज्वल गंध अक्षत् पुष्प चरु दीपक धरूं।
वर धूप निर्मल फल विविध बहु जनमके पातक हरूं।
इह भांति अर्घ चढाय नित भवि करत शिवपंक्ति मचूं।
अरहन्त श्रुत-सिद्धान्त गुरु-निरग्रंथ नित पूजा रचूं॥

वसुविधि अर्घ संयोजके अति उत्साह मन कीनः
जासों पूजूं परमपद देव-शास्त्र-गुरु तीन।

[ॐ ह्रीं भगवान श्री....जिनेन्द्रदेव-गुरु-शास्त्र पूजनार्थे अर्घ निर्वपामीति....स्वाहा....]

इस प्रकार पूजन करनेके बाद प्रभुजी-सन्मुख शांतिसे बैठकर थोड़ी देर तक दोनोंने जिनगुणोंका चिन्तन किया, और हमारा आत्मा भी जिनेन्द्र-भगवान जैसा ही है-ऐसा विचार किया। फिर भगवानको नमस्कार करके घरकी ओर चले।

रास्तेमें राजकुमारने जिनकुमारसे कहा—भाई जी! आज आपके साथमें भगवानका दर्शन-पूजन करनेसे मुझे इतना हर्ष हुआ कि, अबसे मैं प्रतिदिन प्रभुका दर्शन करनेके लिये जरूर आऊँगा।

* * *

घर जानेके बाद दोनों मित्र राजाके पास पहुँचे। देरी हो जानेसे राजाने उनसे पूछा-भैया, देरी क्यों हुई?

राजकुमारने विनयके साथ कहाः—महाराज, क्षमा कीजिये; हम तो भगवान जिनेन्द्रदेवके दर्शन करनेको गये थे; वहाँ मेरे इस मित्रके साथ भगवानका दर्शन-पूजन करनेसे मुझे बहुत आनन्द आया। इसी कारण आपके पास आनेमें देरी हुई।

राजाने खुश होकर कहा—बच्चो, तुमने बहुत उत्तम काम किया; अरिहन्त भगवान ही विश्वके सच्चे देव हैं; राजाओंके भी वे राजा हैं। चक्रवर्ती जैसे बड़े बड़े राजा भी प्रभुके चरणोंकी पूजा करते हैं। अतः सबसे पहले हमें उन्हींका दर्शन करना चाहिये। तुम्हारे कार्यसे प्रसन्न होकर मैं तुम दोनोंको यह सुवर्णहार भेट देता हूँ।

जिनकुमारः—महाराज, आपकी बड़ी कृपा है। परन्तु हमारी ऐसी भावना है कि, यह सुवर्णहार हमको देनेके बदलेमें इसका सुवर्णकलश बनवाकर आप जिनमंदिरके ऊपर चढावें;—इससे हमें विशेष खुशी होगी।

राजाने यह बात स्वीकार की, और कहा कि बच्चो, जिस राज्यमें तुम्हारे जैसे धर्मप्रेमी बालक बसते हैं वह राज्य धन्य है! कल जब तुम लोग जिनमंदिर जाओगे तब मैं भी तुम्हारे साथ ही चलूंगा और मन्दिर पर सुवर्णकलश चढ़ाऊँगा।

दोनों मित्र बड़े खुश हुए, और अपने अन्य साधर्मियोंसे भी यह बात की; यह सुनकर आनंदित होकर सभीने भगवानके जयनादसे गगनको गुँजा दिया—

बोलिये जिनेन्द्र भगवानकी जय...!

—भगवानके दर्शन करते समय बोलनेकी स्तुति—

तुभ्यं नमः त्रिभुवनार्तिहराय नाथ.	तीर्थंकरो जगतमें जयवंत होवें।
तुभ्यं नमः क्षितितलामलभूषणाय.	ॐकारनाद जिनका जयवंतो होवे।
तुभ्यं नमः त्रिजगतः परमेश्वराय.	जिनके समोसरण भी जयवंत होवें।
तुभ्यं नमः जिन! भवोदधिशोषणाय.	सद्धर्मतीर्थ जगमें जयवंत होवें।

अर्हन्तो भगवंत इन्द्रमहिताः सिद्धाश्च सिद्धीश्वराः
आचार्या जिनशासनोन्नतिकराः पूज्या उपाध्यायकाः
श्री सिद्धान्तसुपाठकाः मुनिवरा रत्नत्रयाराधकाः
पंचैते परमेष्ठिनः प्रतिदिनं कुर्वन्तु वो मंगलं.

जैनोंका जीवन कैसा हो ?

(सदाचारसे सुशोभित जीवन)
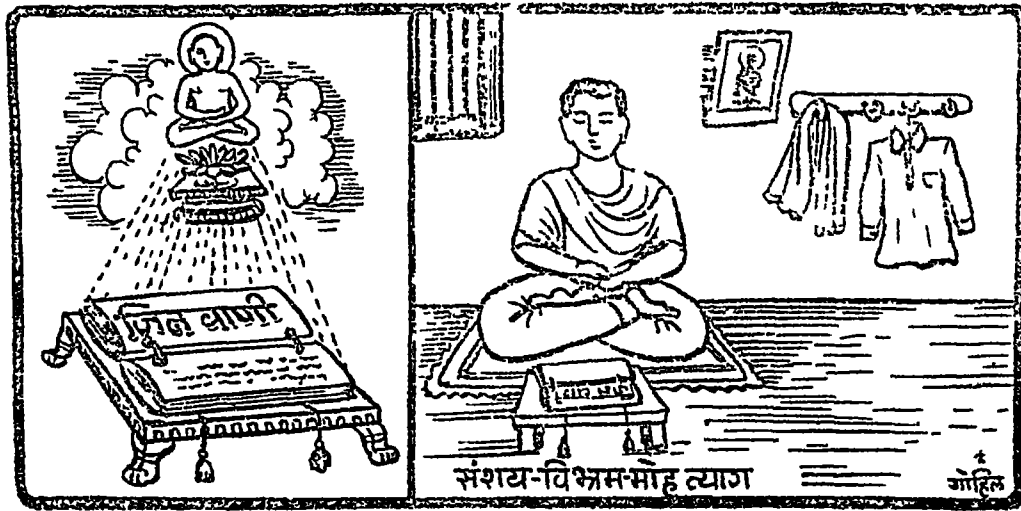
हमारे गांवमें पाठशाला चलती है। हमारे गुरुजी हमको धर्मकी अच्छी अच्छी बातें सिखाते हैं। एकबार महावीर जयन्तीके दिन गुरुजीने नीचे लिखी शिक्षायें दी, जिन्हें सुनकर सबको खुशी हुईः—

बच्चो, हमें अपना जीवन बहुत ऊंचा बनाना चाहिए,
क्योंकि हम जैन हैं, हमारा धर्म बहुत महान है।

हमारे भगवानने धर्मका बहुत ऊंचा उपदेश दिया है; और आत्माकी पहचान कराई है। हमें आत्माकी पहचान करनी चाहिए। आत्माकी पहचान करनेसे हमारा जीवन महान बनेगा।

* हमें सभी जीवोंके साथ प्रेमसे रहना चाहिए; खास करके अपने साधर्मी भाई–बहनोंके प्रति बहुत वात्सल्य-प्रेम रखना चाहिए, उन्हें किसी प्रकारका दुःख हो तो वह दूर करके उनका धार्मिक उत्साह बढ़ाना चाहिए, और उन्हें हर प्रकारकी सुविधा देनी चाहिए।

❀ किसी भी जीवकी निंदा या उन्हें कष्ट देनेका भाव नहीं करना चाहिए।

❀ असत्य–झूठ बोलना वह भी पाप है–जो कि हमारे जीवनको मलिन करता है, अतः असत्यसे भी दूर रहना चाहिए।

❀ इसी प्रकार चोरी, दुराचार एवं तीव्र ममता, इन सभी पापोंसे भी दूर रहना चाहियेः क्योंकि पाप करनेसे जीव बहुत दुःखी होता है।

❀ जिसमें मांस हो, जिसमें अण्डा हो, जिसमें शराब हो, जिसमें मधु हो और जिसमें कोई जीव-जन्तु हो, ऐसी वस्तुको खाना भी नहीं चाहिए, छूना भी नहीं चाहिए, और उसके खानेवालेका संग भी नहीं करना चाहिए। कभी जुआ खेलना नहीं चाहिए।

❀ अच्छे अच्छे मित्रोंका संग करना चाहिए, और प्रतिदिन उनके साथ धर्म-चर्चा करना चाहिए तथा उनको साथमें लेकर जिनेन्द्र भगवानका दर्शन-पूजन करना चाहिए; कभी तीर्थयात्रा भी करना चाहिए। जब अपने मित्रोंसे मिलो तब हाथ जोड़के 'जयजिनेन्द्र' कहना चाहिए, और बड़ोंसे नमस्ते करना चाहिए।

भरतचक्रवर्तीके छोटे छोटे लड़के सब ऐसा जीवन जीते थे। वे धर्मका अभ्यास करते थे, कोई भी अभक्ष चीज खाते नहीं थे। वे रातको कभी नहीं खाते थे. और बिना छना जल कभी नहीं पीते थे। वे देहसे भिन्न आत्माको पहचानते थे। बंधुओ! हमें भी उनके जैसा बनना है, अतः हम भी ऐसा करेंगे। ऐसा करनेसे अपना जीवन ऊंचा बनेगा। और ऊंचा जीवन वही सुखी जीवन है।

अच्छा जीवन बनानेके लिये तुम्हें यह छोटीसी दस पंक्तियाँ सुनाता हूँ जो तुम्हें बहुत पसंद आयेंगी, तुम इन्हें याद रख लेना—

[सब एकसाथ बोलो]

(१) मैं जैनधरमका बच्चा हूँ।
(२) मैं अहिंसक जीवन जीता हूँ।
(३) मैं दुःख न किसीको देता हूँ।
(४) मैं अभक्ष कभी नहीं खाता हूँ।
(५) मैं मन्दिर प्रतिदिन जाता हूँ।
(६) मैं प्रभुका दर्शन करता हूँ।
(७) मैं साधर्मीसे प्रेम करूँ।
(८) मैं धर्मका अभ्यास करूँ।
(९) मैं आतम-साधक वीर बनूँ।
(१०) महावीर प्रभु-सा सिद्ध बनूँ।

हमारे बालविभागके हजारों सदस्य निम्न चार बातोंका पालन करते हैं—

- हररोज भगवानके दर्शन करते हैं।
- तत्त्वज्ञानका अभ्यास करते हैं।
- रात्रिको खाते नहीं।
- सिनेमा देखते नहीं।

चार गति व मोक्ष
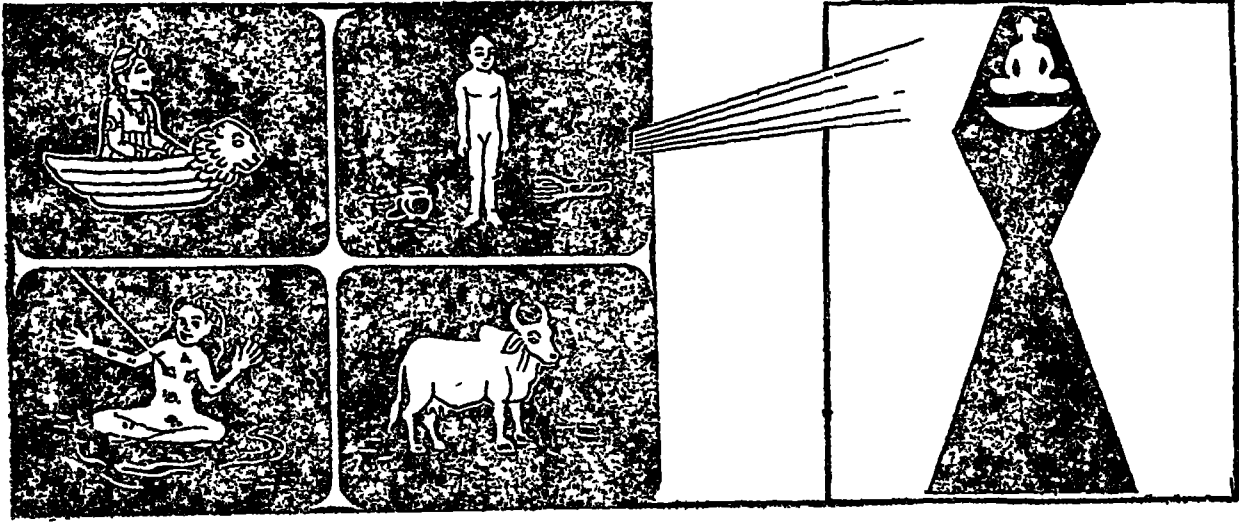
इस जगतमें अनंत-अनंत जीव हैं। प्रत्येक जीव ज्ञानस्वरूप है।
कोई संसारी हैं, कोई मुक्त हैं।

जो जीव सम्यग्दर्शन–ज्ञान–चारित्र पूर्ण करके, व अष्ट कर्मोंको नष्ट करके सिद्ध हुए उन्हें मुक्त कहते हैं; उन्हें शरीर भी नहीं होता; वे सदा मोक्ष-गतिमें रहते हैं एवं परम सुखी हैं। वे फिर कभी संसारमें अवतार धारण नहीं करते।

जो जीव मुक्त नहीं हुए हैं वे संसारकी चारगतिमें रहते हैं—कोई मनुष्यगतिमें रहते हैं, कोई नरकगतिमें, कोई देवगतिमें, एवं अनन्त जीव तिर्यंच-गतिमें रहते हैं। इस प्रकार संसारी जीव चारों गतिमें पुनः पुनः जन्म-मरण करते रहते हैं। उस जन्म-मरणका मुख्य कारण मिथ्यात्व है, इसलिये उसे महापाप जानकर छोड़ना चाहिए।

संसारमें भटकता हुआ जीव नरकगतिमें हो आया और स्वर्गमें भी हो आया है; तिर्यंच भी हुआ है और मनुष्य भी हुआ है; परन्तु आत्माका मोक्षपद उसने कभी प्राप्त नहीं किया; इसलिये इस मनुष्यभवमें मोक्षका उपाय करना चाहिये।
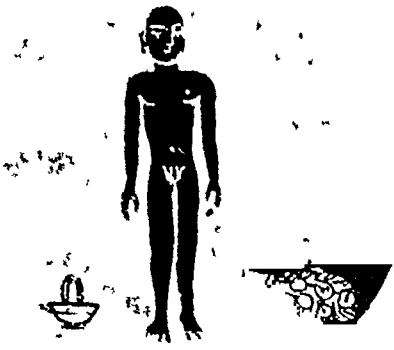
(१) चारों गतियोंमें मनुष्य गतिको सबसे ऊंची इसलिये मानी गई है कि इसमें जीव अपने सभी गुण प्रगट करके भगवान बन सकता है और मोक्ष भी पा सकता है। अतः मनुष्य होकरके हमें यही प्रयत्न करना चाहिए।

(२) नरकगतिकी आयु उसीको बंधती है कि जो आत्माकी पहचान नहीं करता, जो धर्मका प्रेम नहीं करता और जो बहुत पापोंमें अपना जीवन गंवाता है। ऐसा जीव नरकमें जाकरके वहाँ बहुत दुःख पाता है। वहाँ उसके शरीरको बहुत बार काटते हैं, जलाते हैं। उसे न कभी खानेको अन्न मिलता, न कभी पीनेको पानी। नरकमें बहुत दुःख है, अतः बच्चो! पाप कभी नहीं करना चाहिए। यदि नरकमें भी कोई जीव आत्मविचार करके सम्यग्दर्शन प्रगट करे तो उसे वहाँ भी आत्म-शांति मिल सकती है।

(३) तीसरी देवगति है। पुण्य करनेवाला जीव देव होकर स्वर्गमें जाता है। स्वर्गमें सुख है-ऐसा कहा जाता है; परन्तु बंधुओ! एक बात ध्यानमें रखना कि, यदि आत्मज्ञान नहीं है तो स्वर्गमें भी सच्चा सुख नहीं मिल सकता। स्वर्गमें भी वही जीव सुखी है जिसने आत्माको पहचाना है। आत्मज्ञानके बिना तो स्वर्गका देव भी दुःखी है। स्वर्गके द्वारा मोक्षमें नहीं जाया जा सकता, किन्तु मनुष्य होकर सम्यक्-दर्शन-ज्ञान-चारित्रके द्वारा ही हम मोक्षमें जा सकते हैं।

(४) तिर्यचगतिमें अनन्त जीव हैं; किन्तु उनमेंसे बहुभाग तो ऐसे हैं कि जिनको कुछ विचारशक्ति ही नहीं। एकेन्द्रियवाले, दोइन्द्रियवाले, तीनइन्द्रियवाले, चारइन्द्रियवाले और मनरहित पांचइन्द्रियवाले—उन असंज्ञी जीवोंको तो इतना कम ज्ञान है कि वे विचार ही नहीं कर सकते। विचार करनेवाले (संज्ञी) पंचेन्द्रिय जीव बहुत थोडे हैं। इस तिर्यंचगतिमें भी बहुत दुःख है। कीड़ा–कुत्ता–चूहा–बैल–घोडा–मेंढक–बन्दर–हिरन–मछली आदि तिर्यंचोंको जो दुःख होता है वह तो हम देखते ही हैं। बहुत मायाचारी–छलकपट करनेसे या अतीव लोभ करनेसे तिर्यंच गतिमें जाना पड़ता है। अतः लोभ व मायाचार नहीं करना चाहिए। तिर्यंचमें भी कोई जीव धर्मोपदेश पाकर आत्मज्ञान कर लेते हैं, तो उन्हें भी आत्माका थोड़ासा सुख मिल जाता है; और कुछ ही भवोंमें वे संसारसे छूटकर मोक्ष पाते हैं। महावीरप्रभुका जीव भी जब तिर्यंच गतिमें (सिंह) था तब उसने आत्मज्ञान पाया था और बादमें वह भगवान हुआ।

(५) संसारकी चारों गतियोंसे भिन्न प्रकारकी ऐसी पंचम गति वह मोक्षगति है। मोक्ष प्राप्त करनेवाला जीव सदाकाल अपने शुद्धस्वरूपमें रहता है और शाश्वत सुखी जीवन जीता है।

हमें चारों गतियोंके दुःखसे छूटना हो और मोक्षसुखको पाना हो तो आत्मज्ञान करना चाहिए। आत्मज्ञानके बिना जीव चार गतिमें रुलता है। आत्मज्ञान करनेसे जरूर मोक्ष मिलता है।
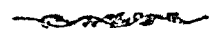
मोक्षका मार्ग
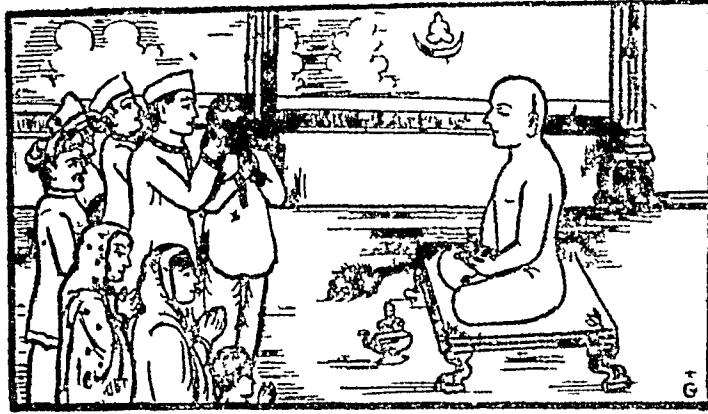
[आगे प्रगट होनेवाली पहली पुस्तकके एक पाठकी रूपरेखा]

एकवार एक मुमुक्षु जीवको विचार आया कि, अरे! इस संसारमें अनादिसे मैं दुःखी हूँ। इस दुःखको मिटाकर आत्माका हित व सुख मुझे प्राप्त करना है। वह हित किस प्रकारसे हो?

ऐसा विचार करके वह जीव वनकी ओर चला; वनमें अनेक मुनिवर आत्माके ध्यानमें विराजमान थे; वे अत्यंत शांत थे। अहा! उनकी शांतमुद्रा मोक्षका मार्ग ही दिखला रही थी।

उनकी वन्दना करके मुमुक्षु जीवने बहुत विनयके साथ पूछा—प्रभो! आत्माके हितका उपाय क्या है? मोक्षका मार्ग क्या है?

आचार्य महाराजने कृपापूर्वक कहा: हे भव्य!

सम्यग्दर्शन–ज्ञान–चारित्राणि मोक्षमार्गः।

[सम्यग्दर्शन–ज्ञान–चारित्र मोक्षमार्ग है।]

मुनिराजके श्रीमुखसे ऐसा मोक्षमार्ग सुनकर वह मुमुक्षु अतीव प्रसन्न हुआ और भक्तिके साथ उस सम्यग्दर्शन–ज्ञान–चारित्रकी आराधना करनेके लिये उद्यमी हुआ।

बंधुओ! हमें भी उस मुमुक्षुकी तरह मोक्षमार्गको पहचानना चाहिए, और उसकी आराधना करनी चाहिए। वह सम्यग्दर्शन–ज्ञान–चारित्रके तीन पाठ जैन बालपोथीमें तुमने पढ़े होंगे। उसकी विशेष समझ अब आगेकी किताबमें दी जायेगी।

मेरा जैनधर्म

(जैन बालकोंका कूच-गीत)

धर्म मेरा धर्म मेरा धर्म मेरा रे:
प्यारा प्यारा लागे जैन धर्म मेरा रे।

ऋषभ हुए वीर हुए धर्म मेरा रे;
बलवान् बाहुबली सेवे धर्म मेरा रे।

भरत हुए राम हुए धर्म मेरा रे;
कुन्दकुन्द जैसे सन्त हुए धर्म मेरा रे।

चंदना सीता अंजना हुई धर्म मेरा रे:
ब्राह्मी राजुल मात शोभावे धर्म मेरा रे।

सिंह सेवे बाघ सेवे धर्म मेरा रे:
हाथी वानर सर्प सेवे धर्म मेरा रे।

आतमाका ज्ञान देता धर्म मेरा रे;
रत्नत्रयका दान देता धर्म मेरा रे।

सम्यक्त्व जिसका मूल है वह धर्म मेरा रे:
सुख देता मोक्ष देता धर्म मेरा रे।

धर्म मेरा धर्म मेरा धर्म मेरा रे:
प्यारा प्यारा लागे जैन धर्म मेरा रे।

[पाठ १२]

महावीर प्रभुकी हम सन्तान....
हैं तैयार....हैं तैयार

[जैन बालकोंका कूच-गीत]

महावीर प्रभुकी हम सन्तान हैं तैयार हैं तैयार ।
जिनशासनकी सेवा करने हैं तैयार हैं तैयार ।
सिद्ध पदका स्वराज लेने हैं तैयार हैं तैयार ।
अरिहन्त प्रभुकी सेवा करने हैं तैयार हैं तैयार ।
ज्ञानी गुरुकी सेवा करने हैं तैयार हैं तैयार ।
तीर्थधामकी यात्रा करने हैं तैयार हैं तैयार ।
जिन सिद्धान्तका पठन करने हैं तैयार हैं तैयार ।
जिनशासनको जीवन देने हैं तैयार हैं तैयार ।
सम्यग्दर्शन प्राप्त करने हैं तैयार हैं तैयार ।
आत्मज्ञानकी ज्योत जगाने हैं तैयार हैं तैयार ।
साधुदशाका सेवन करने हैं तैयार हैं तैयार ।
मोहशत्रुको जीत लेनेको हैं तैयार हैं तैयार ।
वीतरागी निर्मोही होने हैं तैयार हैं तैयार ।
आत्मध्यानकी धून मचाने हैं तैयार हैं तैयार ।
ज्ञायकका पुरुषार्थ करने हैं तैयार हैं तैयार ।
वीरमारगमें दौड़ लगाने हैं तैयार हैं तैयार ।
मोक्ष-दरवाजा खोलनेको हैं तैयार हैं तैयार ।
संसार-सागर पार उतरने हैं तैयार हैं तैयार ।
सिद्ध प्रभुके साथ रहनेको ....हैं तैयार हैं तैयार ।

[हम सब वीर प्रभुकी सन्तान है, वीर प्रभुकी सन्तान कैसे कैसे उत्तम कार्य करनेके लिये तैयार होती है-यह इस कूच-गीतमे दिखाया गया है, प्रत्येक बालकको उत्साहित करनेवाला यह कूच-गीत सभीको पसन्द आयगा। प्रभातफेरी और रथयात्रा जैसे प्रसग पर यह गीत गाया जाता है।]
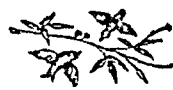
इस पुस्तकमेंसे १०१ प्रश्न यहाँ दिये जाते हैं-इनका उत्तर विद्यार्थीसे लेना: यदि उसको उत्तर न आवे तो पुस्तकमेंसे देखकर भी वह उत्तर दे ऐसी पद्धति रखना। तदुपरांत बालकोंको एक दूसरेके साथ भी यह प्रश्नोत्तर कराना। प्रश्नोत्तरके द्वारा बालकोंको अभ्यास करनेका उत्साह मिलेगा और उनकी समझ पक्की होगी। प्रत्येक पाठमेंसे आठ-दस प्रश्न लिये गये हैं।

१. जैन बालपोथीका पहला भाग तुमने पढ़ा है?

२. तुम कौन हो?

३. तुम्हारे देव कौन हैं?

४. अरिहन्त देव कैसे हैं?

५. वे हमको क्या दिखाते हैं?

६. मुक्तिमार्ग कैसा है?

७. तुम किसके समान हो?

८. अरिहंत बननेके लिए किसको जानना चाहिए?

९. पंचपरमेष्ठीके वंदनकी कविता बोलो।

१०. पंचपरमेष्ठी कौन है?

११. तुम्हें क्या होना अच्छा लगता है?

१२. राजा होना अच्छा कि भगवान होना अच्छा?

१३. पंचपरमेष्ठी किससे होते हैं?

१४. पंचपरमेष्ठी किसका उपदेश देते है?

१५. अपनेको सबसे प्रिय कौन है?

१६. शुद्ध नमस्कार-मंत्र बोलो।

१७. तुम सवेरे और शामको कौनसी स्तुति करते हो?

१८. एक माताके तीन पुत्र, उनके नाम क्या हैं?

१९. चार मंगल हैं, वे कौन?

२०. लोकमें उत्तम चार वस्तु कौनसी हैं?

२१. जीवको शरणरूप कौन हैं?

२२. जीव क्या करे, तो मंगल होता है?

२३. 'चत्तारि मंगलं' का पाठ बोलो।

२४. तीर्थंकर किसको कहते है?

२५. भरत चक्रवर्ती किसके पुत्र थे?

२६. ऋषभदेव तीर्थंकर कहां जन्मे?

२७. अयोध्या अपना तीर्थ है, वह किसलिए?

२८. राजगृहीमें विपुलाचल पर धर्मका उपदेश किसने दिया?

२९. तीर्थंकर भगवानने कौनसा मार्ग दिखाया?

३०. मोक्षका मार्ग क्या है?

३१. जैनधर्म क्या है?

३२. रागको जैनधर्म कहते हैं या वीतराग-भावको?

३३. चौवीस तीर्थंकरके नाम बोलो।

३४. चौवीस भगवानकी मूर्ति कहां है?

३५. ऋषभदेव, अभिनंदन, शांतिनाथ, तथा पार्श्वनाथ प्रभुके चिह्न बताओ।

३६. चंद्र, कल्पवृक्ष, गेंडा और सिंहके चिह्नसे कौनसे भगवान पहिचाननेमें आते हैं?

३७. अपने तीर्थकरोंका जीवन कैसा होता है?

३८. ऊंचा जीवन कैसा होता है?

३९. तुमने किसी तीर्थंकरका जीवनचरित्र पढ़ा है?

४०. आत्मा किस लक्षणसे जाना जाता है?

४१. तीर्थंकर भगवानके द्वारा बताया हुआ धर्म आज भी अपनेको कौन समझाते हैं?

४२. चोवीस तीर्थंकर किस देशमें जन्मे?

४३. ऋषभदेवके आत्माने सम्यक्त्व कब प्राप्त किया?

४४. ऋषभदेवके जीवने पिछले आठवें भवमें मुनिको आहारदान दिया था, उसे देखकर चार तिर्यंच खुशी हुए, वे कौन?

४५. ऋषभदेवको वैराग्य कब हुआ?

४६. उन्हें केवलज्ञान कहां हुआ?

४७. वर्षीतप किसे कहते हैं? वह किसने किया?

४८. वर्षीतपका पारना किसने कराया?

४९. भरतक्षेत्रमें मोक्षका दरवाजा किसने खोला?

५०. ऋषभदेव कहांसे मोक्ष गए?

५१. भरत चक्रवर्तीके १०० राजकुमार गेंद खेलते-खेलते क्या विचार कर रहे थे?

५२. गेंद खेलनेमें जो मजा आता है यह सच्चा सुख है? कि राग है?

५३. जड़में सुख होता है?

५४. सुख किसमें होता है?

५५. जगतमें दो प्रकारकी वस्तु है, वह कौनसी?

५६. जीव किसको कहते हैं?

५७. अजीव किसको कहते हैं?

५८. क्या अजीव वस्तुमें भी गुण होते हैं?

५९. वस्तु किसको कहते हैं?

६०. सौ राजकुमारोंको बुद्धमबारने क्या समाचार दिए?

६१. ऋषभदेव भगवानकी कोई प्रार्थना बोलो।

६२. जीव संसारमें क्यों भटकता है?

६३. जीव-अजीवकी पहिचानसे क्या होता है?

६४. बुद्धमबारके पाससे जयकुमारकी दीक्षा के समाचार सुनकर राजकुमारोंने क्या किया?

६५. ऋषभदेवके दरबारमें जाते समय राजकुमार क्या गाते थे?

६६. जिनकुमार और राजकुमारकी कथासे तुमको कौनसी शिक्षा मिली?

६७. चक्रवर्ती राजासे भी बड़े कौन हैं?

६८ भगवानकी पूजाका पद बोलो।

६९. भगवानकी कोई स्तुति बोलो।

७०. अर्घमें कौनसी आठ वस्तुएं होती हैं?

७१. गंधोदक किसे कहते हैं?

७२. 'मोक्षमार्गस्य नेतारं'-यह स्तुति बोलो।

७३. यह स्तुति किसने बनायी?

७४. मोक्षमार्गका नेता कौन है?

७५ हम भगवानको वंदन किसलिये करते हैं?

७६. राजाके पास जानेमें राजकुमारको देरी क्यों हुई?

७७. क्या राजाने उनको कुछ सजा की?

७८. राजाने कुमारोंको क्या इनाम दिया?

७९. कुमारोंने उस इनामका क्या किया?

८०. तुम्हारे गांवमें राजा और भगवान आयें, तो तुम पहले किसके पास जाओगे?

८१. साधर्मीके प्रति अपनेको क्या करना चाहिए?

८२. कैसे कार्योंसे दूर रहना चाहिए?

८३. हम जिनवरकी संतान हैं—इसकी दस लाइन बोलो।

८४. चार गति कौन सी हैं?

८५. चार गतिके सिवाय पांचमी गति कौनसी?

८६. कौनसी गतिमेंसे मोक्ष पा सकते हैं?

८७. चार गतिमें मनुष्य गति उत्तम क्यों है?

८८. मनुष्य होकर क्या करनेसे मोक्ष होता है?

८९. मोक्षसुख पानेके लिये क्या करना?

९०. अपने जैनधर्ममे कौनसे महापुरुष हुए?

९१. जैनधर्म क्या देता है?

९२. धर्मका मूल क्या है?

९३. तुम्हारा प्यारा धर्म कौनसा है?

९४. जैनधर्मके गीतकी चार पंक्ति बोलो।

९५. मुमुक्षु जीवको किसकी भावना हुई?

९६. मुमुक्षुने वनमें जाकर मोक्षका मार्ग किनसे पूछा?

९७. मुनिराजने मोक्षका मार्ग क्या बताया?

९८ हम किसकी संतान हैं?

९९. वीरप्रभुकी संतान कैसे उत्तम कार्योंको करनेके लिए तैयार है? उसकी दो लाइन बोलो।

१००. जैनधर्मकी प्रभावना करनेके लिये क्या करेंगे?

१०१. जैनधर्मकी यह बालपोथी तुम्हें कैसी अच्छी लगी?

—: इतना करना :—

बालको ! सबेरे जल्दी उठना ।

उठकर आत्माका विचार करना ।

प्रभुका स्मरण करना और नमस्कार-मंत्र बोलना ।

फिर स्वच्छ वस्त्र पहिनकर जिनमन्दिर जाना ।

जिनमन्दिर जाकर भगवानके दर्शन करना ।

इसके बाद शास्त्रजीको वंदन करना,

और उनका पठन करना ।

फिर गुरुजीके दर्शन करना, उनका उपदेश सुनना,

और सुनकर विचार करना ।

हर रोज इतना करना ।

ऐसा करनेसे तुम्हारा आत्मा पवित्र होगा ।